जनवाचन आंदोलन

बाल पुस्तकमाला

“ किताबों में चिड़ियाँ चहचहाती हैं
किताबों में खेतियाँ लहलहाती हैं
किताबों में झरने गुनगुनाते हैं
परियों के किस्से सुनाते हैं
किताबों में रॉकेट का राज है
किताबों में साइंस की आवाज है
किताबों का कितना बड़ा संसार है
किताबों में ज्ञान की भरमार है
क्या तुम इस संसार में नहीं जाना चाहोगे?
किताबें कुछ कहना चाहती हैं
तुम्हारे पास रहना चाहती हैं ”

–सफ़दर हाश्मी

लेनिन का बचपन, प्रेस्टोली स्कूल, टेडी ओनील, बाल हृदय की गहराईयों के वसीली सुखोम्लींसकी, जॉन होल्ट, मिराम्बिका, हेलन केलर, गांधीजी, सृजना स्कूल, जवाहरलाल नेहरू, पार्क स्कूल के अनुभवों और अन्य प्रेरक प्रसंगों का संग्रह।

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

मूल्यः 15 रुपये B - 29 Price : 15 Rupees

खुशियों का स्कूल

अरविन्द गुप्ता

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने देश भर में चल रहे साक्षरता अभियानों में उपयोग के लिए किया गया है। जनवाचन आंदोलन के तहत प्रकाशित इन किताबों का उद्देश्य गाँव के लोगों और बच्चों में पढ़ने–लिखने की रुचि पैदा करना है।

खुशियों का स्कूल : *Khushiyon Ka School*
अरविन्द गुप्ता : *Arvind Gupta*

जनवाचन बाल पुस्तकमाला के तहत भारत ज्ञान विज्ञान समिति द्वारा प्रकाशित

/Eसाभार : फुलझड़ी

लेजर ग्राफिक्स : अभय कुमार झा

सातवां संस्करण : वर्ष 2007

मूल्य : 15 रुपये

Published by Bharat Gyan Vigyan Samiti
Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block
Saket , New Delhi - 110017
Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773
email: bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com
Printed at Sun Shine Offset , New Delhi - 110018

खुशियों का स्कूल

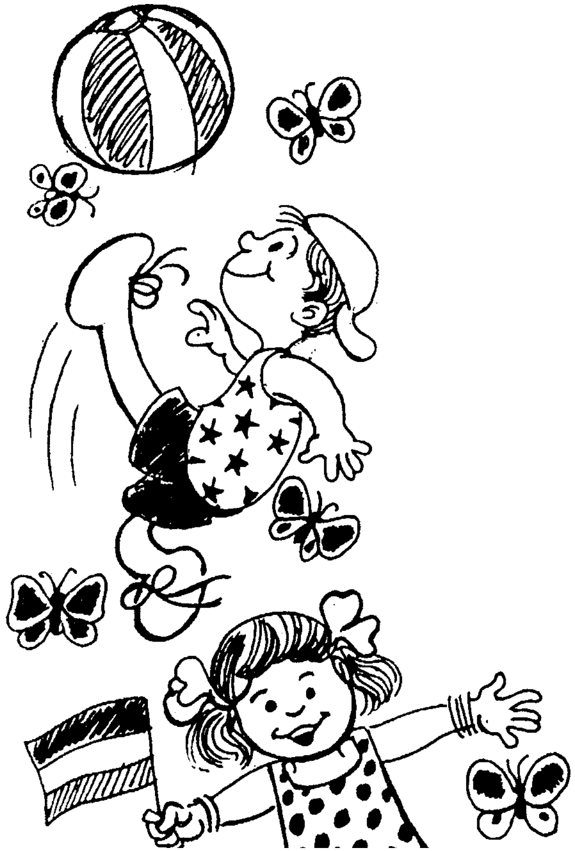

अरविन्द गुप्ता

घर का अखबार

लेनिन विश्व के एक महान नेता थे। 1917 की रूसी क्रांति का उन्होंने नेतृत्व किया। इससे दुनिया के करोड़ों लोग दास्ता और गुलामी की बेड़ियों से मुक्त हो सके। लेनिन गरीब किसान और मजदूरों के नेता थे जबकि उनका जन्म एक सम्पन्न परिवार में हुआ था। घर में एक बौद्धिक माहौल था। पिता शिक्षा विभाग में ऊंचे पद पर थे। लेनिन के बड़े भाई ऐलिक्जैंडर फिज़िक्स के छात्र थे। छोटी बहन स्कूल जाती थी और मां घर पर ही रहती थीं।

लेनिन के घर में हर हफ्ते एक अखबार लिखा जाता था। अखबार के लिए घर के हरेक सदस्य को कोई लेख लिखना होता था। पिता स्कूलों के मुआयने के दौरान घटी किसी रोचक घटना के बारे में लिखते। मां भोजन संबंधी लेख अथवा कविता लिखतीं। भाई क्योंकि विज्ञान के छात्र थे इसलिए वह नई वैज्ञानिक खोजों के बारे में लिखते। लेनिन अपने स्कूल के अनुभवों के बारे में लिखते और छोटी बहन अखबार के लिए चित्र बनाती। यह चार

पन्ने का अखबार हाथ से लिखा जाता था। इतवार वाले दिन, नाश्ते की मेज़ पर अखबार को सामूहिक रूप से पढ़ा जाता था। अखबार पढ़ने के बाद ही सब लोग नाश्ता खाते थे।

बचपन के इन संस्कारों का लेनिन के जीवन पर गहरा असर पड़ा। बहुत साल देश से बाहर रहने के बाद जब लेनिन रूस वापिस लौटे तो सबसे पहले उन्होंने एक राष्ट्रीय अखबार शुरू किया। इस अखबार का नाम था 'इस्करा' यानि चिंगारी। इस अखबार ने रूस में अलग-अलग गुटों को एक सूत्र में बांधा और रूसी क्रांति में एक अहम भूमिका निभाई।

बचपन में पड़े अच्छे संस्कार ही इंसानियत की बुनियाद हैं। अगर बचपन में बच्चों को एक अच्छा, सुखद और बौद्धिक माहौल मिलेगा, तो वह बड़े होकर अवश्य प्रतिभाशाली बनेंगे। ❒

प्रेस्टोली स्कूल

बात 1930 की है। टेडी ओनील 26 वर्ष के एक उत्साही शिक्षक थे। उनकी आंखों में अच्छी शिक्षा का एक सपना था। उन्हें इंग्लैंड में प्रेस्टोली नाम की एक मज़दूर बस्ती के स्कूल में भेज दिया गया। वहां बेहद गरीबी थी और साधनों का बहुत अभाव था। न तो वहां किताबें थीं और न ही बच्चों के बैठने के लिए कोई बेंच-कुर्सी। बच्चों में भी जानने की कुछ इच्छा न थी। बड़ा ही नीरस वातावरण था।

टेडी को बढ़ईगीरी का शौक था। अगले दिन उसने अपने औज़ार निकाले और बच्चों के लिए किताबों की अल्मारी बनाने बैठ गया। स्कूल के एक कमरे में पुराना फर्नीचर भरा था। उसने उन्हीं को काट-पीट कर बच्चों के बैठने के लिए बेंच बनायीं। टेडी को काम करता देख बच्चे भी ठोका-पीटी में लग गए। किसी ने गुड़िया का घर बनाया किसी ने चिड़िया का पिंजड़ा, तो किसी ने खरगोश का घर बनाया। पढ़ाई की जगह कई दिनों तक लकड़ी

के विभिन्न सामान बनाने का काम चलता रहा।

जब बच्चों की किताबों की अल्मारी बन गई तब बच्चे किताबों की मांग भी करने लगे। कुछ बच्चों ने खरगोश के घर में सचमुच खरगोश पाले। अब वह खरगोशों की जीवन चर्या और खान-पान के बारे में जानने को उत्सुक थे। जिन बच्चों ने पिंजड़े में चिड़िएं पाली थीं, वह चिड़ियों के बारे में और जानना चाहते थे। क्योंकि यह तमाम जानकारी किताबों में थी, इसलिए बच्चे अपने प्रश्नों के उत्तर ढूंढने के लिए किताबें पढ़ने लगे। किताबों में उन्हे अब बहुत आनंद आने लगा।

टेडी ओनील एक क्रांतिकारी शिक्षक थे। उन्हें रट्टू-तोता स्कूलों से चिढ़ थी। 30 साल तक उन्होंने प्रेस्टोली के स्कूल में पढ़ाया। सारी दुनिया से लोग उस स्कूल को देखने आते। उनके काम से गतिविधियों पर आधारित शिक्षण पद्धति को बहुत बल मिला। उनके अनुभव एक अत्यंत रोचक पुस्तक में लिखे हैं। पुस्तक का नाम है 'द इडियट टीचर'।

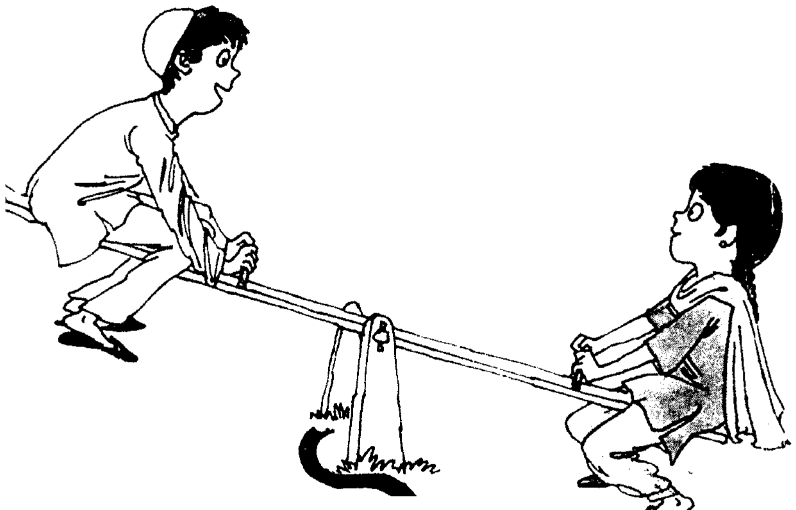

खुशियों का स्कूल

वसीली सुखोम्लीन्स्की सोवियत रूस के प्रसिद्ध शिक्षाविद् थे। दूसरे महायुद्ध के दौरान प्राथमिक स्कूल के अध्यापक 23 वर्षीय वसीली मोर्चे पर लड़ने चले गए। दुश्मन के कब्जे में आ गए इलाके में उनकी पत्नी वेरा रह गयीं। वह दुश्मन से लड़ने में छापामारों की मदद करती थीं। एक दिन फासिस्ट दरिंदों ने उन्हें धर पकड़ा। कैद में उन्हें बेटा हुआ। वेरा को तमाम अमानवीय यातनायें पहुंचाई जिससे वह छापामारों का नाम उगल दें। लेकिन साहसी वेरा ने मुंह न खोला। तब जल्लादों ने मां की आंखों के सामने उसके कुछ दिन के बच्चे को मार डाला और फिर वेरा की भी जान ले ली। वसीली लड़ाई में घायल होकर लौटे। उनकी छाती में धातु के टुकड़े धंसे थे और उनके हृदय में पत्नी और बच्चे की मौत का गहरा शोक था।

वसीली 29 साल तक अपने गांव पाव्लिश में 'खुशियों का स्कूल' चलाते रहे। युद्ध के कारण बहुत से बच्चे अनाथ हो गए थे। बच्चों के दिल मुरझा गए थे। वसीली ने अपनी निष्ठा और लगन से इन बच्चों के जीवन में दुबारा खुशी भर दी। वह हर बच्चे की पृष्ठभूमि और पारिवारिक ज़िंदगी को बहुत करीबी से जानते थे।

स्कूल के प्रिंसिपल होने के बावज़ूद वह दिन भर बच्चों को पढ़ाते थे। बच्चों की संगत में उन्हें लगातार नई उर्जा मिलती थी।

संसार के अनेक प्रगतिशील शिक्षाविद् यह कहते आए हैं कि बच्चों की शिक्षा और उनका चरित्र–निर्माण, यह दोनों चीज़ें आपस में जुड़ी हैं। वसीली ने अपने व्यवहार और सिद्धांत में इस सपने को सच कर दिखाया। उनके अनुसार बच्चों को 'योग्य' या 'अयोग्य' करार दिए बिना भी उन्हें अच्छी शिक्षा दी जा सकती है।

सुखोम्लीन्सकी ने वैसे तो कई किताबें लिखीं परंतु उनकी सबसे मशहूर पुस्तक है 'बाल हृदय की गहराइयां'। इसमें उन्होंने मां–बाप और शिक्षकों से अंतरंग बातचीत की है। वह लिखते हैं ''मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि स्कूल के पहले के कुछ साल तथा स्कूल के आरंभिक वर्ष ही बहुत हद तक इंसान को भविष्य निर्धारित करते हैं''।

''पहले–पहले जब बच्चे स्कूल में आते हैं तो उनके हृदय में कितनी उमंगें, कितना रोमांच होता है। अगर हम और आप बच्चों की आंखों में जिज्ञासा की चमक जगाए रख सकें, तो बच्चे अवश्य बड़े होकर अच्छे इंसान बनेंगे। ❒

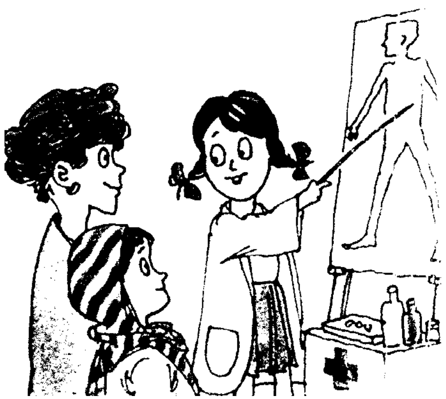

घुमक्कड़ शिक्षाविद्

जॉन होल्ट दुनिया के जाने–माने शिक्षाविद थे। उन्होंने 10 पुस्तकें लिखीं। उनकी एक पुस्तक 'बच्चे असफल कैसे होते हैं' हिंदी में भी छपी है। इसे एकलव्य, भोपाल ने छापा है।

तमाम लोग शिक्षक का पेशा इसलिए अपनाते हैं क्योंकि उनके पास और कोई चारा नहीं होता। दुनिया में ऐसे खुशनसीब कम ही हैं जो अपने शौक और सपनों के ज़रिए अपनी आजीविका चला पाते हैं। वे शायद बच्चों को इतनी संवेदना से इसलिए भी देख पाए क्योंकि वह पेशे से शिक्षक नहीं थे। उन्होंने तीन वर्ष अमरीकी जलसेना की पनडुब्बी पर काम किया। चार साल उन्होंने एक स्कूल में पढ़ाया भी। वह क्लास के अपने अनुभव को एक डायरी में दर्ज़ करते जाते थे। उनकी पहली पुस्तक 'हाऊ चिलड्रन फेल' दरअसल उनकी डायरी का ही एक अंश थी। 1964 में छपी इस किताब से शिक्षाजगत में तहलका सा मचा। शिक्षा पर यह एक नायाब किताब थी – एकदम बेबाक और सुंदर। होल्ट की कलम में गज़ब का जादू था।

होल्ट सीधे–सादे स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्हें अमरीकी उपभोक्ता संस्कृति से चिढ़ थी। पर्यावरण संरक्षण में उनकी बेहद रुचि थी। अपने जीवन में वे किफायत बरतते। वह एक बड़े प्लास्टिक के टब में खड़े होकर नहाते और बाद में उस सारे पानी को खाद के गड्ढे में डाल देते। इस खाद को वह शहर के बागों की क्यारियों में डाल आते। उन्हें अपने शहर न्यूयार्क से बहुत प्यार था। वह जब भी अपने दफ्तर से बाहर निकलते तब उनके हाथ में एक बड़ा कपड़े का थैला होता। वह सड़क पर पड़ी प्लास्टिक और कांच की बोतलों को इकट्ठा करते। जब वह किसी कचरा पेटी के पास से गुज़रते तो वह उसमें अपने थैले की बोतलें डाल देते। 1985 में कैंसर से उनकी मृत्यु हुई। ❐

मिराम्बिका

''शिक्षा का पहला सच्चा सिद्धांत यह है कि कोई किसी को कुछ सिखा नहीं सकता। शिक्षक मात्र एक सहायक होता है।'' यह शब्द महर्षि श्री अरविन्द के हैं। उन्हीं के आदर्शों पर आधारित है दिल्ली में स्थित मिराम्बिका स्कूल। 15 वर्ष पहले इसे श्री अरविन्द के दो डच अनुयाइयों ने शुरू किया। मिराम्बिका सामान्य स्कूलों से भिन्न है। स्कूल पांचवीं कक्षा तक है। उसके बाद बच्चे अन्य स्कूलों में दाखिला लेते हैं। हर कक्षा में केवल 12-15 बच्चे हैं। साथ में 2-3 शिक्षक भी। अधिकांश शिक्षक अरविन्द आश्रम में ही रहते हैं। मां-बाप भी स्कूल में काफी सहयोग देते हैं।

स्कूल किसी शैक्षिक बोर्ड, अथवा एन.सी.ई.आर.टी. के पाठ्यक्रम से नहीं बंधा है। यहां शब्दों की अपेक्षा अनुभव पर अधिक बल दिया जाता बच्चों को प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित किया जाता है। स्कूल परंपरागत विषयों में नहीं बंधा है। बच्चे स्वयं निणर्य लेते हैं कि वह किस प्रोजेक्ट अथवा विषय पर काम करेंगे।

उदाहरण के लिए 'पक्षी' प्रोजेक्ट चुनने के बाद सबसे पहले बच्चे पुस्तकालय जाकर चिड़ियों से संबंधित सभी पुस्तकें ले आयेंगे। वे आश्रम के 26 एकड़ के कैम्पस में पक्षी-निरीक्षण करेंगे। साथ-साथ बच्चे दिल्ली से 40 किलोमीटर दूर स्थित सुल्तानपुर पक्षी अभयारण्य का दौरा भी करेंगे। 'पक्षी' प्रोजेक्ट में भाषा, गणित, विज्ञान, भूगोल, कला सभी विषय लिपट जाते हैं। बच्चे चिड़ियों पर कवितायें और निबंध लिखते हैं। कई पक्षी अन्य देशों से लंबी उड़ान भर कर भारत आते हैं। बच्चे उड़ान के रास्ते को

ग्लोब पर बनाते हैं। वह नक्शे में बर्ड-सैंक्टुरीज़ की स्थिति देखते हैं। वह कागज़ के वर्गों को मोड़-मोड़ कर कितने ही तरह की उड़ने वाली चिड़िए बनाते हैं। इस प्रकार बच्चों को पक्षियों के जीवन की रोचक और ठोस जानकारी मिलती है। इस प्रकार सीखने का आनन्द ही कुछ अनूठा है। ❒

जो देख कर भी नहीं देखते

कभी–कभी मैं अपने मित्रों की परीक्षा लेती हूं यह परखने के लिए कि वह क्या देखते हैं। हाल ही में मेरी एक प्रिय मित्र जंगल की सैर करने के बाद वापिस लौटीं। मैंने उनसे पूछा, ''आपने क्या–क्या देखा ?''

''कुछ खास तो नहीं,'' उनका जवाब था। मुझे बहुत अचरज नहीं हुआ क्योंकि मैं अब इस तरह के उत्तरों की आदी हो चुकी हूं। मेरा विश्वास है कि जिन लोगों की आंखें होती हैं, वह बहुत कम देखते हैं।

क्या यह संभव है कि भला कोई जंगल में घंटा भर घूमे और फिर भी कोई विशेष चीज़ न देखे? मुझे –जिसे कुछ भी दिखाई नहीं देता, को भी सैकड़ों रोचक चीज़ें मिल जाती हैं, जिन्हें मैं छू कर पहचान लेती हूं। मैं भोजपत्र के पेड़ की चिकनी छाल और चीड़ की खुरदरी छाल को स्पर्श से पहचान लेती हूं। वसंत के दौरान मैं टहनियों में नई कलियां खोजती हूं। मुझे फूलों की पंखुड़ियों की मखमली सतह छूने और उनकी घुमावदार बनावट महसूस करने में अपार आनंद मिलता है। इस दौरान मुझे प्रकृति के जादू का कुछ अहसास होता है। कभी, जब मैं खुशनसीब होती हूं तो टहनी पर हाथ रखते ही किसी चिड़िया के मधुर स्वर कानों में गूंजने लगते हैं। अपनी अंगुलियों के बीच झरने के पानी को बहते हुए महसूस कर मैं आनंदित हो उठती हूं। मुझे चीड़ की फैली पत्तियां या घास का मैदान किसी भी मंहगे कालीन से अधिक प्रिय है। बदलते हुए मौसम का समां मेरे जीवन में एक नया रंग और खुशियां भर जाता है।

कभी–कभी मेरा दिल इन सब चीज़ों को देखने के लिए मचल उठता है। अगर मुझे इन चीज़ों को सिर्फ छूने भर से इतनी खुशी मिलती है, तो उनकी सुंदरता देख कर तो मेरा मन मुग्ध ही हो जायेगा। परंतु जिन लोगों की आंखें हैं, वह सचमुच बहुत कम देखते हैं। इस दुनिया के अलग–अलग सुंदर रंग उनकी संवेदना को नहीं छूते। मनुष्य अपनी क्षमताओं की कभी कदर नहीं करता। वह हमेशा उस चीज़ की आस लगाए रहता है जो उसके पास नहीं है।

यह कितने दुख की बात है कि दृष्टि के आर्शीवाद को लोग एक साधारण सी चीज़ समझते हैं, जबकि इस नियामत से ज़िंदगी को खुशियों के इंद्रधनुषी रंगों से हरा भरा जा सकता है। ❐

हेलन केलर –प्रसिद्ध अमरीकी लेखिका – जन्म से ही देख और सुन नहीं सकती थीं।

(साभार वेब–ऑफ –लाइफ)

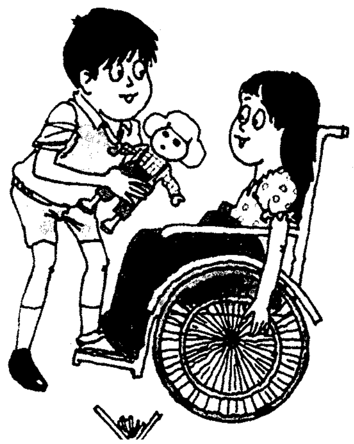

खाना पकाने द्वारा शिक्षण

नई तालीम विद्यालय, सेवाग्राम में काम के ज़रिए सीखने पर अधिक ज़ोर था। काम के द्वारा विज्ञान –शिक्षण का मैं एक उदाहरण दे रहा हूं। छात्रों को बारी–बारी से खाना बनाने की ज़िम्मेदारी सौंपी जाती थी। स्कूल के रसोईघर में रोज़ाना करीब 100 लोग खाना खाते थे। खाना पकाने का ज़िम्मा बारी–बारी से आठ लोगों की एक टोली को सौंपा जाता था। खाने पर प्रतिमाह कितना खर्च होना चाहिए उसका बजट टोली को पहले ही से बता दिया जाता था।

आहार–शास्त्र की दृष्टि से भोजन संतुलित हो, खाना सब को पसंद आए और उसका खर्चा बजट के अंदर हो, इसकी योजना बनाते–बनाते हमारे छक्के छूट जाते थे। आलू की सब्ज़ी सबसे सस्ती अवश्य थी, परंतु पौष्टिक तत्व के रूप में उसमें मुख्यत: स्टार्च था इसलिए उसे रोज़ खाना संभव न था। इंडियन काउंसिल फार मेडिकल रिसर्च द्वारा सुझाई न्यूनतम तेल की मात्रा से तो सारा बजट केवल तेल पर ही खर्च हो जाता। एक कुशल गृहणी के अनुभव से तो हम वंचित थे। हम आहार–शास्त्र और अर्थ–शास्त्र से जूझते, मशक्कत करते हुए कोई हल खोजने की चेष्टा करते। बहुत बार भोजन की बनाई हमारी योजना बहुत कागज़ी होती। वास्तव में उसे बना पाना संभव ही न होता। दाल को गलने में कितना समय लगेगा, इस हिसाब में भी हम अक्सर मात खा जाते थे। फिर रात को खाने के सारे बर्तन घिसते और मांझते हुए हम अपने आपको एक घायल सैनिक जैसा महसूस करते थे। अगले दिन का खाना पकाने की समस्या मुंह बाए खड़ी रहती थी।

लेकिन इस पूरी प्रक्रिया के दौरान हम तीन बातें अच्छी तरह सीख गए। वे थीं– आहार–शास्त्र, घर का अर्थ–शास्त्र और पाक–शास्त्र यानि खाना पकाना। धनिए के हरे पत्तों में विटामिन ए की मात्रा 10, 600 यूनिट होती है, यह मुझे तीस साल बाद, आज भी अच्छी तरह याद है।

बचपन में जो चीज़ें मैंने कुछ दिनों में रसोईघर में काम करके सीखीं, वह मैं मेडिकल कॉलेज में दस साल बिता कर भी नहीं सीख पाया। रोज़मर्रा के जीवन की गतिविधियों से भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है। ❒

मूल लेखक :

डॉ. अभय बंग, 'साम्ययोग' मराठी मासिक से अनूदित।

सृजना स्कूल

एलीनेर वाट्स एवं शिवराम

हमने एक नया स्कूल क्यों शुरू किया? इसलिए कि शिक्षा रोचक और रोमांचक हो। वह बच्चों को बोझिल या नीरस न लगे। ऐसी शिक्षा हो जो बच्चों के भविष्य के लिए व्यवहारिक और उपयोगी हो। शुरू में हमनें 9 वर्ष की आयु के केवल 15 बच्चों को ही लिया।

दसवीं तक हमने कोई परीक्षा नहीं रखी क्योंकि परीक्षायें 'सीखने' में कतई सहायक नहीं होती हैं। हमारा 'सीखने' से अर्थ है – समझना और सोचना। स्कूल में इसका एकदम उल्टा होता है। बच्चा परीक्षा के लिए कुछ तथ्य रट लेता है – आग जलने के लिए आक्सीजन ज़रूरी है। समझ न पाने के कारण वह आगे चलकर उसे भूल जाता है। परंतु इसी बात को वह एक सरल से प्रयोग द्वारा सीख सकता है– कि जलती हुई मोमबत्ती, कांच के गिलास के ढकने से बुझ जाती है। प्रयोग करने के बाद वह इस तथ्य को कभी नहीं भूलेगा। हम अपना पाठ्यक्रम बच्चों के वातावरण के आधार पर तैयार करते हैं। हम चाहते हैं कि हरेक विषय बच्चों के अपने जीवन और समाज से जुड़ा हो। मिसाल के लिए हम अपने गांव को ही लें। यह आंध्र प्रदेश के नेल्लोर जिले में स्थित है। विज्ञान के विषय में बच्चे इस बात का अध्ययन करेंगे कि गांव के मकान किस

चीज़ और किस प्रकार बने हुए हैं, उनकी दीवारें नीची क्यों हैं? उनकी छतें ढलावदार क्यों हैं? लोग अपने पशुओं को कहां बांधते हैं और कहां काम करते हैं, आदि। हम मंदिर, पोस्ट आफिस, पंचायत घर, स्कूल आदि के बारे में भी चर्चा करते हैं।

सभी बच्चे तेलगू जानते हैं, इसलिए पहले साल हम अंग्रेज़ी में केवल मौखिक कार्य ही करते हैं। हम कई रोचक खेलों का प्रयोग करते हैं जिससे अंग्रेज़ी बड़े स्वाभाविक रूप में सीखी जा सके। हम कई गीतों और नृत्यों का भी प्रयोग करते हैं, जिसमें गीत के अर्थ के साथ-साथ भाव-भंगिमायें भी आ जाती हैं। इससे बच्चे उन शब्दों का अर्थ तो सीख ही जाते हैं साथ में उस भाषा की लय को भी सीख जाते हैं। सरल नाटक और नकल उतारना भी अंग्रेज़ी सीखने के लिए उपयोगी हो सकता है। मातृभाषा ही विचारों को व्यक्त करने का सबसे सशक्त माध्यम होती है। परंतु दुर्भाग्य से अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा को हमारे यहां अधिक महत्व दिया जाता है और लोग इसे तेलगू भाषा से अच्छा समझते हैं।

1. तेलगू भाषा में बच्चों के लिए बहुत कम पुस्तकें लिखी गई हैं, जबकि अंग्रेज़ी में ढेर सारी अच्छी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

2. अगर बच्चे शुरू से अंग्रेज़ी सीख लेंगे तो आगे चलकर उन्हें और भी अच्छी पुस्तकें पढ़ने को मिल सकेंगी।

गणित में जोड़ और घटाने को भी हम प्रयोगों के माध्यम से समझाते हैं। बच्चों को सचमुच के पैसे देकर उनकी पहचान कराई जाती है। फिर कक्षा में दुकान खोलकर उसमें सामान्य चीज़ें – फ्राक, गिलास, बर्तन, गेंद आदि बेचीं जाती हैं। बच्चे उन पैसों से यहां सामान खरीदने आते हैं। हम में से एक व्यक्ति बेईमान दुकानदार बन जाता है जो बच्चों से धोखाधड़ी करने की कोशिश करता है। जो बच्चा इस धोखाधड़ी में फंस जाता है उसके लिए यह बहुत शर्म की बात होती है।

इसलिए आगे से वह बड़ा सर्तक रहता है। जोड़–घटाने की ठोस क्रियाओं से गणित रोचक बन जाती है।

हाथ से काम करने को हम बहुत महत्व देते हैं। इसके दो कारण हैं – एक तो इस से सुंदरता के प्रति बच्चों की भावना का विकास होता है, दूसरे इन गतिविधियों के माध्यम से हम अन्य विषयों को भी रोचक बना सकते हैं। उदाहरण के लिए कार्ड से त्रिभुज, वर्ग, आयत, गोले काट कर गणित को रोचक बनाया जा सकता है। हम बच्चों को अधिक से अधिक प्रकार की वस्तुओं से क्रियायें करने का मौका देते हैं जैसे – पेंटिंग, मिट्टी का काम, चित्रकला, छपाई, पेपर–कटिंग आदि। हम लकड़ी का कार्य भी शुरू करना चाहते हैं परंतु इसके औज़ार आदि बड़े मंहगे पड़ते हैं। इसीलिए अभी तो यह कर पाने में असमर्थ हैं।

कृषि के बारे में बच्चे पहले ही से कुछ न कुछ जानते हैं। जब नई फसल बोई जाती है तब हम उसके बारे में चर्चा करते हैं। जैसे उस फसल में कौन सी खाद डालनी चाहिए और अच्छी उपज के लिए क्या करना चाहिए। हमारे स्कूल में हरेक बच्चे के पास अपनी खेती है। बच्चे अपनी खेती का पूरा रिकार्ड रखते हैं।

हम चाहते हैं कि बच्चे नियमित रूप से स्कूल आयें। गरीब घर के लोग ऐसा नहीं कर पाते हैं क्योंकि फसल की बुआई, कटाई के समय छोटे बच्चों की देखभाल एवं घर के अन्य कामों के लिए इन बच्चों की आवश्यकता होती है। हम चाहते हैं कि पाठ्यक्रम पूरा होने तक बच्चे स्कूल में रहें। लेकिन हम वास्तविकता से मुंह नहीं मोड़ सकते। कई बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं। ❒

असफलता का क, ख, ग

जॉन होल्ट

अधिकांश बच्चे स्कूल में फेल होते हैं। उनमें से ज़्यादातर बच्चे तो पूरी तरह से फेल होते हैं। स्कूल में दाखिला लेने वाले चालीस प्रतिशत बच्चे स्कूली स्तर की शिक्षा पूरी नहीं कर पाते हैं। कालेज के स्तर पर, हर तीसरा छात्र बीच में ही पढ़ाई छोड़ देता है।

जो बच्चे आगे के क्लास में धकेल दिए जाते हैं, वह कुछ जानते हैं या नहीं यह कहना मुश्किल है। बच्चे अपने सीखने, समझने और रचने की अपनी जन्मजात और असीम क्षमता का केवल एक छोटा भाग ही स्कूलों में विकसित कर पाते हैं, जबकि पैदाइश के दो-तीन वर्षों में वे इसका भरपूर उपयोग करते हैं।

यह असफलता बच्चों में क्यों आती हैं?

इसलिए क्योंकि वे डरते हैं, ऊबते हैं और भ्रमित रहते हैं।

उनके मन में सबसे बड़ा भय होता है अपने मां-बाप, शिक्षकों आदि को नाराज़ करने का। इन व्यस्कों की असीम आशायें और अपेक्षायें बच्चों के सिरों पर बादलों की तरह गहराती हैं।

बच्चे ऊबते इसलिए हैं, क्योंकि जो कुछ उन्हें स्कूल में करने को दिया जाता है, वह सबका सब बेहद निरर्थक और नीरस होता है।

बच्चे भ्रमित इसलिए होते हैं क्योंकि उन पर हमेशा अर्थहीन

शब्दों की बौछार होती रहती है। ये शब्द बराबर उस सब का खंडन करते रहते हैं जो बच्चों को पहले बताया गया था। इन शब्दों का बच्चों के खुद के अनुभवों से कुछ लेना-देना नहीं होता है।

अच्छे स्कूलों की दो विशेषतायें होती हैं। अगर बच्चे स्कूल में कुछ नहीं सीखते हैं, तो इसकी ज़िम्मेदारी स्कूल खुद स्वीकार करता है। इसका दोष वह बच्चे और उसके परिवार पर नहीं लादता है। दूसरे, अगर कक्षा में उपयोग किया कोई तरीका, या विधि कारगर होती नहीं लगती तो वह उसे त्याग कर और कोई तरीका अपनाने की चेष्टा करते हैं। अच्छे स्कूल हमेशा पद्धतिओं और उपायों को असफल करार देते हैं, छात्रों को नहीं। ❐

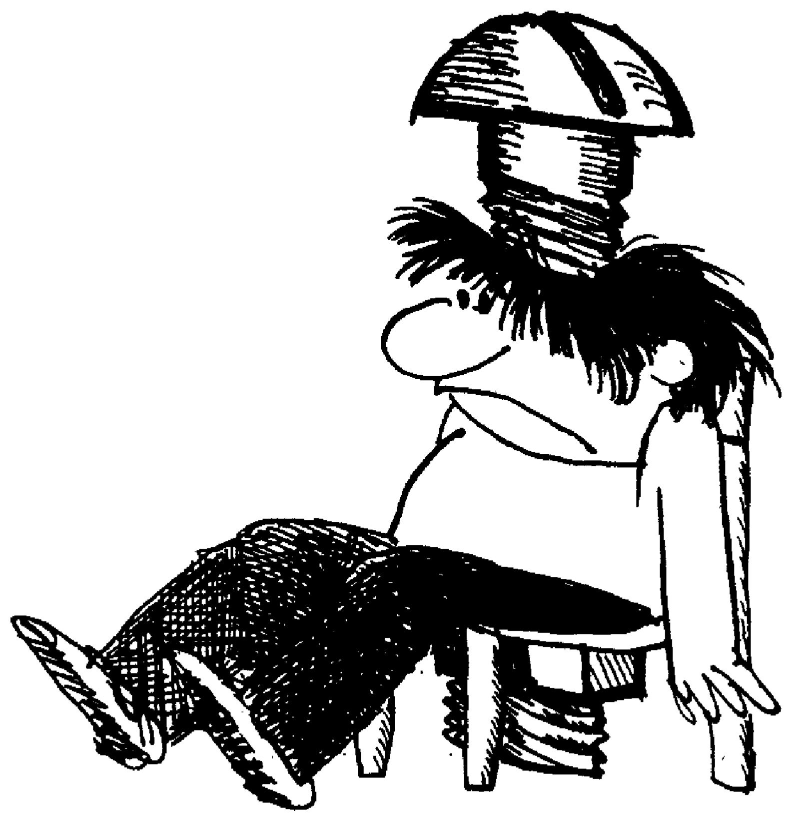

बच्चों का अपना अखबार

शहीद भगतसिंह पुस्तकालय, पिपरिया, मध्य प्रदेश में रविवार वाले दिन बच्चों का काफी जमघट इकट्ठा था। उस दिन एक भूरे कागज़ को दीवार पर चिपका दिया गया था। कागज़ पर लिखा था **'बच्चों का अखबार'**। बच्चों से कहा गया कि वह अपनी मर्ज़ी से जो चाहें लिखें, या चित्र बनायें और उन्हें भूरे कागज़ पर चिपका दें।

पहले तो बच्चों ने अपनी किताबों के कुछ अंशों को लिख कर चिपकाया या फिर चित्रों की नकल उतारी। काफी चर्चा के बाद ही बच्चों को यह समझ में आया कि उन्हें कुछ अपने आप लिखना है। पहली लिखी गई खबर थी **'कुएं में गिरी बकरी'** दुसरी थी **'नाले में गिरा कुत्ता'**।

एक शाम स्थानीय सिनेमा-घर में कुछ लड़ाई-झगड़ा हुआ। एक घंटे बाद जब बच्चे पुस्तकालय आए और उन्होंने भूरे अखबार पर लड़ाई की खबर पढ़ी तब उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसके बाद से तो बच्चे सभी विषयों के बारे में लिखने लगे - खेल-कूद, छुट्टियां, सपने, समस्यायें आदि।

जल्द ही बच्चों द्वारा लिखा यह अखबार **'बाल चिरइया'** के नाम से साइक्लोस्टाइल होकर छपने लगा। 1989-90 में इस अखबार की 1000 प्रतियां छपती थीं, जिन्हें बच्चे 25 पैसे में खरीदते थे। बच्चे अपने स्कूल की असलियत को अखबार के माध्यम से उजागर करने लगे। एक मास्टर गैरहाज़िर रहते थे, दूसरे क्लास में सोते रहते थे। हेड-मास्टर साहब बच्चों से मुफ्त में सब्ज़ी मंगवाते थे। इन खबरों से कभी-कभी बच्चों को पिटाई भी सहनी पड़ती, परंतु अखबार की लोकप्रियता बढ़ती रहती। कई बच्चे खबरों को अपनी स्थानीय भाषा बुंदेली में लिखते और अपने माता-पिता को पढ़कर सुनाते।

आप भी आसानी से अपने स्कूल में एक भूरा कागज़ चिपका कर बच्चों को लिखने, चित्र बनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। जब बच्चे अपने खुद के अनुभवों को लिखेंगे, तभी उनकी मौलिक लेखन की क्षमता बढ़ेगी। बच्चे लिखने से पहले अपने आस-पास की घटनाओं का बारीकी से अध्ययन करेंगे। यह कम-लागत का अखबार बच्चों की सुप्त प्रतिभा को उजागर करने का एक सशक्त माध्यम बन सकता है। ❐

रेत का एक कण

जवाहरलाल नेहरू

किसी भी भाषा– जैसे हिंदी, उर्दू, अंग्रेज़ी को पढ़ने से पहले उसके अक्षरों को सीखना पड़ेगा। इसी प्रकार प्रकृति की वर्णमाला को सीखने के बाद ही आप पत्थरों में रची प्रकृति की कहानियों को पढ़ पायेंगे। सभी लोग प्रकृति को थोड़ा–बहुत तो पढ़ना जानते ही हैं।

जब आप किसी गोल, चिकने पत्थर को देखते हैं तो वह आपको क्या बताता है? वह कैसे चिकना और चमकीला बना? उसके खुरदुरे किनारे और कोने कहां गए? अगर आप किसी भी बड़े पत्थर को तोड़ेंगे तो वह नुकीला और खुरदुरा होगा। वो देखने में गोल, चमकीले, चिकने पत्थर जैसा बिल्कुल नहीं लगेगा। पत्थर का नुकीला, खुरदुरा टुकड़ा कैसे गोल और चिकना बना?

अगर आप कान खोल कर सुनेंगे और आंखें खोल कर देखेंगे तो पत्थर आपको अपनी आत्मकता अवश्य सुनायेगा। वह कहेगा कि लाखों–करोड़ों वर्ष पहले शायद वह भी वैसा ही पत्थर था जैसा आपने अभी तोड़ा है। वह भी नुकीला था और उसके कोने खुरदुरे थे। वह किसी पहाड़ी के ढलान पर पड़ा था।

फिर ज़ोरदार बारिश आई और वह उसको बहाकर घाटी में ले गई। वहां एक पहाड़ी झरना उसे धकेल कर एक नदी तक ले गया। और छोटी नदी पत्थर को बड़ी नदी तक ले गई। पत्थर पूरे समय नदी की तलहटी में लुढ़कता रहा। इससे उसके नुकीले कोने गोल हो गए और खुरदरी सतह चिकनी हो गई।

यह वही गोल और चिकना पत्थर है जिसे आप देख रहे हैं। नदी के साथ बहता जाता तो उसका आकार छोटा होता जाता और अंत में वह रेत का एक कण बन जाता। उस रेत से बच्चे किले बनाते। प्रकृति सबसे अच्छी शिक्षक है। ❒

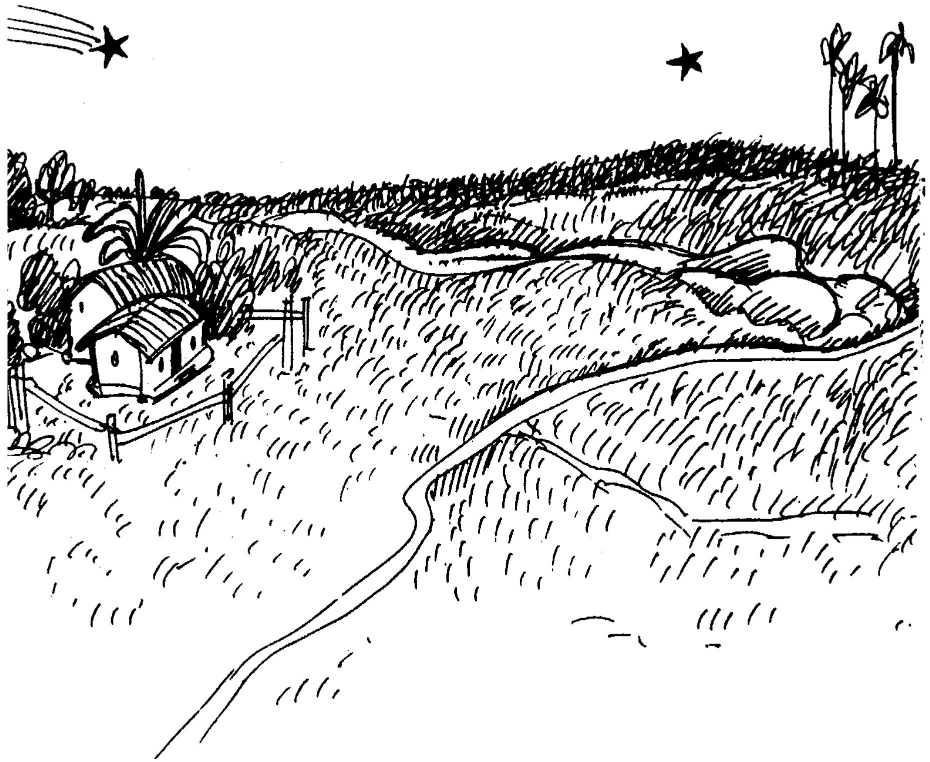

विज्ञान की पढ़ाई

अक्सर विज्ञान की पढ़ाई कुछ परिभाषाओं और सूत्रों को रटने और इम्तिहान पास करने तक ही सीमित रह जाती है। विज्ञान का जब लोगों की ज़िंदगी से संबंध होगा, तभी वह सार्थक विज्ञान होगा।

आंध्र-प्रदेश के माध्यमिक स्कूल की एक शिक्षिका ने विज्ञान का एक अनूठा प्रयोग किया। उन्हें कहीं से एक पुरानी मच्छरदानी मिल गई। बच्चों की मदद से उन्होंने तार को मोड़-मोड़ कर छल्ले बनाए और उन पर मच्छरदानी के कपड़े को थैली जैसे मढ़ दिया। छल्ले में बांस का एक हत्था लगा देने से वह एकदम बटर-फ्लाई नेट यानि कीटों को पकड़ने वाली जाली बन गई। प्रत्येक बच्चे के लिए एक-एक नेट बनाया गया।

हर बच्चे को धान के खेतों का एक टुकड़ा अलाट किया गया। बच्चों को रोज़ाना एक काम करना था। सुबह स्कूल आते समय उन्हे अपने धान के खेत में एक बार जाली को फिराना था और फिर उसमें पकड़े गए कीड़ों को स्कूलों में लाना था।

स्कूल में बच्चे कीड़ों को अलग-अलग समूहों में बांटते थे। वह उनका नाम जानने और उन्हें पहचानने का प्रयास करते। कौन से कीड़े फसलों के मित्र हैं और कौन से दुश्मन इस बात पर चर्चा होती और इस विषय पर अनुभवी किसानों से जानकारी इकट्ठी की जाती। बच्चे हर दिन कीड़ों की संख्या गिनते और उनका ग्राफ बनाते। इससे कीड़ों की बढ़ौत्तरी का एक सही अनुमान पता चलता। सबसे अधिक कीड़े कब हुए? कीट-नाशक दवा छिड़कने का सबसे उपयुक्त समय कब होगा? क्या रासायनिक दवा से मित्र कीड़े भी मर जायेंगे? क्या नीम के पत्तों का रस या तंबाकू का घोल छिड़काव के लिए ठीक रहेगा?

बच्चे इन सब प्रश्नों पर चर्चा करते, नए प्रयोग करते और जानकारी हासिल करते। यह एक आनंददायी और उपयोगी विज्ञान था। ❐

पार्क स्कूल

कुछ दशक पहले तक बच्चों की स्कूल में बहुत पिटाई होती थी। पर अब इसमें कुछ बदलाव आया है, और शिक्षा कुछ बाल-केंद्रित हुई है। कई प्रगतिशील स्कूल खुले हैं। यहां पर शिक्षकों का रोल बच्चों के सर्वांगीण विकास पर ध्यान देना है, न कि उनके दिमाग में सिर्फ ज्ञान ठूसना है।

कोई भी शिक्षक बच्चों को कभी बोलना नहीं सिखाता है। फिर भी सभी बच्चे स्वाभाविक रूप से अपने आप बोलना सीख जाते हैं। शायद अन्य कुशलतायें भी बच्चे इसी तरह स्वाभाविक रूप में सीख सकते हैं। इंग्लैंड में इसी प्रकार का एक स्कूल है - नाम है पार्क स्कूल। यहां 11 साल उम्र तक के बच्चे पढ़ते हैं। यहां बच्चे खुश रहते हैं और उनके जिज्ञासु दिमाग असंख्यों संभावनाओं को खोजते हैं। स्कूल में कुशल और निष्ठावान शिक्षकों की एक टीम है, जो बच्चों को अपने दिल से चाहते हैं। टीम के लीडर हैं क्रिस निकोल। उनका कहना है, ''सब बच्चों को एक खुशहाल बचपन मिलना चाहिए। यहां बच्चों को खोजने की पूरी आज़ादी

है। मुक्त बच्चे हमेशा ही नई जानकारियां खोजते हैं। वह दुनिया को जानने और समझने के लिए तत्पर होते हैं। वह इस बदलते संसार में अपना स्वयं का रोल ढूंढने का लगातार प्रयास करते हैं।'' शिक्षक को एक संवेदनशील मार्गदर्शक होना चाहिए। शिक्षक को ऐसी अड़चनें नहीं खड़ी करनी चाहिए, जिनसे बच्चों के सीखने की ललक ही खत्म हो जाए। स्कूल के नकारात्मक अनुभवों के कारण न जाने कितने ही लोगों को गणित और पी. टी. से सारी ज़िंदगी के लिए नफरत हो गई है।

बाल-केंद्रित शिक्षा देने के लिए पार्क स्कूल में सामान्य स्कूलों की तमाम स्थापित मान्यताओं को त्याग दिया गया है। स्कूल का माहौल एक दम सहज है जिसमें बच्चे खुश रह सकें। बच्चे शिक्षकों को उनके नाम से बुलाते हैं। स्कूल की कोई यूनीफार्म (गणवेश) नहीं है। हर समय यहां पर छोटे और बड़े बच्चों को एक साथ खेलते हुए देखा जा सकता है। खेलने का बहुत सा सामान है। एक सब्जी का बगीचा है, जिसकी देखभाल बच्चे ही करते हैं।